स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में मानवाधिकार की संकल्पना : वैदिक मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में

बीज शब्द : वैदिक मूल्यों के आधार पर स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में मानवाधिकार की खोज।

ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net

A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research

शोध संचयन

वर्तमान समय में मानवाधिकार विश्व चिन्तन का प्रमुख विषय है। जिनका केन्द्र बिन्दु मानव-मूल्य है, जो दिन-प्रतिदिन कम होता जा रहा है। ऐसी चिन्ताजनक विषम परिस्थितियों पर नियंत्रण पाने के लिए हमें मानवता के संरक्षक वैदिक संस्कृति को पुनः अपनाना होगा। वैदिक मूल्य न केवल भारतीय साहित्य की उच्चता का बोध कराता है बल्कि भारतीय समाज की अक्षुण्ण सांस्कृतिक परम्परा का वाहक भी है। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी में मानवाधिकार की अभिव्यक्ति कितनी सफलता से हो पायी है। प्रस्तुत शोध आलेख इसी चिंतन का प्रतिफलन है।

डॉ. सुमन
डी. जी. कॉलेज कानपुर।

मानवाधिकार से अभिप्राय मौलिक अधिकारों एवं स्वतंत्रता से है, जिसके हकदार सभी मानव हैं। मानवाधिकार की अवधारणा प्राचीन है और इस अवधारणा का विकास सत्ता के निरंकुश उपयोग पर अंकुश लगाने के लिए एक शस्त्र के रूप में हुआ था। अंग्रेज राजनैतिक विचारक जॉन लॉक ने कहा था कि जीवन, स्वतंत्रता और सम्पति के अधिकार मानव को जन्म से ही प्रकृति द्वारा प्रदान किये गये हैं। समाज की संकल्पना के साथ भारतीय चिन्तन समष्टि एवं परमार्थक रहा है। इसमें सन्देह नहीं, कि हमारे प्राचीनतम्, ज्ञाननिधि वेद, मानव मात्र के लिए देश, काल और स्थान की अपेक्षा के बिना आदेश एवं उपदेश करते हैं, जिससे उसका सर्वाधिक उत्कर्ष हो सके। संगच्छीध्वं संवदधावं की सोच के साथ पल्लवित और पुष्पित भारतीय मानस ने दूसरे की उन्नति एवं कल्याण में ही अपनी उन्नति एवं कल्याण को अन्तर्निहित समझा। जन्म के साथ जीने का अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता शिक्षा एवं स्वतंत्रता का अधिकार मानव को प्राप्त हुआ। मानव अधिकारों की सुरक्षा मानव कर्तव्यों के द्वारा ही सम्भव है वैदिक मन्त्रों में सांकेतिक रूप से स्थान-स्थान पर ऋषियों ने कर्तव्यपालन की भाव भूमि तैयार किया है, जिसके परिणामस्वरूप मानव अधिकार स्वतः सुरक्षित हो जाते हैं।

द्वितीय विश्व युद्ध से आहत विश्व ने संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 10 दिसम्बर 1948 ई0 को सार्वभौमिक मानव अधिकारों का एक घोषणा पत्र स्वीकार किया जिसमें नस्ल, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक या राष्ट्रीय अथवा सामाजिक उद्गम स्थान, विचारधारा के बीच सभी प्रकार के अधिकारों और स्वतंत्रताओं का मानव अधिकारी है। भारत ने भी अपने संविधान में मौलिक अधिकारों के रूप में मानवाधिकारों को शामिल किया। भारतीय संविधान में सभी व्यक्तियों को विभिन्न धर्म, जाति, लिंग, रंग तथा वर्ण के बावजूद समान माना गया तथा सभी व्यक्तियों को सामाजिक अधिकार, राजनीतिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक अधिकार प्रदान किये गये। जिसमें समानता, स्वतंत्रता एवं न्याय प्रमुख है। डॉ. जयराम उपाध्याय का मानना है कि "मानव अधिकार वे न्यूनतम अधिकार हैं, जो प्रत्येक व्यक्ति को आवश्यक रूप से प्राप्त होना चाहिए, क्योंकि वह मानव परिवार का सदस्य है। आज मानवाधिकार विश्व चिन्तन का प्रमुख विषय है, जिनको केन्द्र बिन्दु मानव मूल्य है और जिनका दिन प्रति दिन ह्रास होता जा रहा है। ऐसी चिन्ता जनक विषम परिस्थितियों पर नियन्त्रण पाने के लिये हमें मानवता के संरक्षक वैदिक वाङ्मय के सन्देश को अपनाना होगा, क्योंकि जब मनुष्य के मन में सद्विचारों के संस्कार होगें

तभी वह मानवमूल्यों को धारण करेगा जिससे मानवाधिकारों की सुरक्षा संभव हो सकेगी। वैदिक वाङ्मय में ऋषियों ने धर्मयुक्त कर्तव्य पालन के निर्देश दिये हैं, जिससे मानव अधिकार की सुरक्षा स्वयं हो जाती हैं। अत: वैदिक ऋषियों ने मानवाधिकार की सबल भूमिका के रूप में कर्मों की महत्ता स्थापित की है। वेदों में मानवाधिकार की अवधारण के प्रेरक तत्व वैश्विक एकता एवं समानता, शिक्षा, स्वतन्त्रता और विश्व वन्धुत्व की भावना प्रमुख है। वैदिक मंत्रें के समालोचनात्मक विश्लेषण द्वारा स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कविता में मानवाधिकार सम्बन्धी मूल्यों की खोज आधुनिकता को शाश्वतता से जोड़ने का एक लघु प्रयास है क्योंकि वर्तमान की जड़ अतीत में रहती है और फल भविष्य में। यदि आधुनिकता को दीर्घजीवी बनाना है तो उसे एक ओर अपनी जड़ों को अतीत की परम्परा में ढूँढ़ना होगा और दूसरी ओर भविष्य में अपने फल पर भी दृष्टि रखनी होगी ताकि हमें अधिक उज्जवल भविष्यकी ओर ले जा सके।

आज की स्थिति का अवलोकन करते हुए ये कहना उचित है कि अधिकारों के बिना मानव जीवन के अस्तित्व की कल्पना ही नहीं की जा सकती इसी तथ्य को हमारे पूर्वज ऋषि मुनि अच्छी तरह से समझते थे। इसीलिये उन्होंने इसकी व्याख्या 'धर्म' के अंतर्गत की थी जिसके द्वारा जीवन धारण किया जाये, प्राणियों का पालन किया जाये तथा सृष्टि का संरक्षण किया जाये वही, धर्म है। धर्म का पालन समाज के प्रत्येक व्यक्ति के लिये आवश्यक माना गया। सत्य, अहिंसा, प्रेम, अपरिग्रह, दया, क्षमा, धृति इत्यादि मानव मूल्यों को मानवाधिकारों के परिप्रेक्ष्य में हम संपोषक मूलभूत तत्व के रूप में स्वीकार कर सकते हैं क्योंकि मूल्यों के बिना अधिकारों की बात उठाना स्वाभाविक नहीं है। मूल्य और अधिकार दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, एक से ही दूसरे की सत्ता संभव है, अतएव मानवमूल्य आंतरिक तत्व हैं तथा मानवाधिकार बाह्य तत्व। मानवाधिकारों का समुचित प्रयोग कर मनुष्य अपने सर्वांगीण विकास की दिशा में आगे बढ़ता है। यह मनुष्य का मूल भूत अधिकार है जिसे न तो सरकार द्वारा छीना जा सकता है और न ही कानून द्वारा।

अत: मानव जीवन की ऐसी परिस्थितियाँ हैं कि मानवाधिकार के बिना कोई भी व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं कर सकता। मानवाधिकार का सामान्य अभिप्राय उन अधिकारों से है, जो मनुष्य मात्र के लिए उनके उत्कर्ष हेतु समान रूप से प्राप्त हो। वैदिक ऋषि ने दिव्यशक्तियों की इसी भावना से प्रशंसा की कि सूर्य, इन्द्र, अग्नि, वायु सभी देव मानवमात्र के विकास के लिए प्रयत्नशील हैं, यही मानवाधिकार का वैदिक तात्पर्य है कि सभी मुनष्य स्वार्थ रहित, अपने अधिकारों का पालन अपने व दूसरों के विकास के लिए करें। यजुर्वेद के एक मन्त्र के अनुसार व्यक्ति परिवार, समाज, शब्द और विश्व इन पंच आयामों पर व्यक्ति का उत्तरोत्तर विकास और सम्पर्क होता है

"पंचस्वन्त: पुरूषाडआ विवेश।"[2]

मनुष्य इन पाँचों स्तर पर अपना प्रभाव छोड़ता है और इन पाँचों से प्रभावित भी होता है। वैदिक मन्त्रों में कर्तव्य और समभाव को विशेष महत्व दिया गया है। जीवन में लक्ष्यप्राप्ति के लिए कर्तव्याकर्तव्य का निर्धारण वैदिक ऋषि के नीति विश्लेषण का प्रधान तत्व है। यज्ञानुष्ठान, प्रार्थना, परिश्रम पर बल देने वाले निर्देश, कर्तव्य विधान का ही प्रतिरूप है हमें मानना चाहिए। जिस प्रकार इन्द्र आदि देवता उत्तम कर्मो के कारण श्रेष्ठ एवं पूजनीय हुए इसी प्रकार उत्तम और शुभ कर्म मनुष्यों के लिए भी कर्तव्य है। "ये देवासों अभवता सुकृत्या"[3] हिन्दी कवि अनूप के काव्य वर्तमान का कथा नायक भी प्रकृति के विभिन्न उपकरणों को परोपकार में लीन देखता हुआ लोकहित को मनुष्य की सर्वश्रेष्ठ प्रवृत्ति व कर्तव्य मानता है-

"पयोद वारीश दिनेश मेक्ष या
अरण्य गो सज्जन आदि विश्व में
परोपकारार्थ रचे गये यहां
प्रवृत्ति अन्या इससे न श्रेष्ठ है।"[4]

'मनुष्य क्या करे क्या न करे' विषय पर प्रकाश डालने वाले वैदिक ऋषियों ने मानवाधिकार की सबल भूमिका के रूप में कर्मों की महत्ता स्थापित की है जिसके अर्न्तगत वे सभी मौलिक अधिकार आ जाते हैं जो दुनिया भर में मानवाधिकार का आधार पत्र बना। दरअसल मानवाधिकार आधुनिक नागरिक समाज की बुनियादी जरूरतों में से एक है। आधुनिक नागरिक समाज की राष्ट्र-राज्य से यह न्यूनतम अपेक्षा रहती है कि वह अपने नागरिकों को उसके मनुष्य होने के नाते मिले अधिकारों की हर स्थिति में रक्षा करेंगी। संयुक्त राष्ट्र द्वारा इस मुद्दे को उठाते ही मानवाधिकार संगठनों नेसमाज के अंतिम आदमी, हाशिए पर पड़े समूहों के लिए, निर्बल लोगों के लिए सम्मान से जीने के अधिकार और विकास की प्रक्रिया में शामिल किये जाने की मांग को जोर-शोर से उठाना शुरू किया। इस प्रकार पिछले कुछ वर्षो में वंचित तब को के सम्मानपूर्वक जीने का अधिकार मानवाधिकार का प्रमुख विषय बना हुआ है। मानवाधिकार की इस लम्बी सूची से केवल तीन-समानता, स्वतंत्रता और न्याय पर प्रकाश डालने का एक विनम्र प्रयास है, क्योंकि ये तीनों सब अधिकारों में अन्तर्निहित मूलभूत अधिकार हैं। साहित्य अपनी प्रकृति में ही संवेदनशील होता है। वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जनता के अधिकारों उनके कर्तव्यों व सुरक्षा की भावना को व्यक्त करता रहा है। चाहे प्राचीन काल में भारतीय राजाओं का साम्राज्य हो या मध्यकाल में मुगल शासकों का और आधुनिककाल में अंग्रेजों का व वर्तमान

में लोकतन्त्रात्मक भारतीय जन मानस को सम्मानपूर्वक जीने के अधिकार को उठाकर सही अर्थो में मानवाधिकार का नाम लिए बगैर ही हिन्दी साहित्य चाहे वह कहानी उपन्यास या कविता के रूप में हो, मानवाधिकार के मुद्दे को स्वर प्रदान किया। मुद्दे हिन्दी कविता में पहली बार परोक्ष रूप से आपातकाल के दौरान उठाये गये। इंदिरा गांधी ने आपातकाल की घोषणा के साथ ही संविधान प्रदत्त मौलिक अधिकारों को निलंबित कर दिया। मौलिक अधिकारों के निलंबन से पहली बार आम नागरिक को मानवाधिकार की आवश्यकता महसूस हुयी मानवाधिकार की चेतना से परिचालित बुद्धिजीवियों के एक समूह ने आपातकाल का तीखा विरोध किया। प्रसिद्ध साहित्यकार एवं कवि धर्मवीर भारती, भवानी प्रसाद मिश्र, नागार्जुन, विजयदेव नारायण साही, रघुवीर सहाय, रघुवंश, निर्मल वर्मा, गिरधर राठी जैसे अनेकों साहित्यकारों ने अपनी कविता के माध्यम से आपातकाल का खुलकर विरोध किया और संकट की उस घड़ी में मानवाधिकार को बहाल करने की अपनी मुहिम जारी रखी। इस दौर की कविता किसी एक व्यक्ति की नहीं, बल्कि शोषित पीड़ित जनता की हमसफर है। इसलिए वह सैकड़ों नये-पुराने रचनाकारों के माध्यम से अभिव्यक्त हो रही है। वह अपने को संघर्षशील मानव समाज की युग-संघर्षी संस्कृति और परम्परा यानी अपने अतीत से और उस भविष्य से भी जोड़ती है जिसे किसी न किसी दिन हमारे देश की संघर्ष चेतना जनता को शोषणमुक्त करने के लिए अवश्य ही लायेगी[5] भारत की संस्कृतिक दीर्घ परम्परा है और उसके अपने विशिष्ट मूल्य हैं। माना कि समय-समय पर इन मूल्यों में विभिन्न परिवर्तन होते रहे हैं किन्तु हम अपने अतीत से कटकर नहीं रह सकते। स्वतंत्रता के पश्चात्, कवि संश्लिष्ट एवं सुसंस्कृत व्यक्तित्व की खोज करने लगे। अतीत की सांस्कृतिक चेतना अर्थात वैदिकीय चेतना से जुड़कर भविष्य का अन्वेषण अनेक कवियों की रचनाओं में स्पष्ट झलकता है।

समानता-

समानता का अर्थ बराबरी से है यहां जन्म से न कोई छोटा है न कोई बड़ा। हम ब्रह्म के अंश है, ब्रह्म से भिन्न नहीं- 'जीवों ब्रह्मैव नापर' जब सब समान हैं तो भेद-भाव कैसा। "वर्तमान जाति व्यवस्था जो विश्व के कई भागों में मानवीय भेदभाव का आधार है वेद में नहीं प्राप्त होती है। गुण और कर्म के अनुसार निर्धारित की गयी वर्ण व्यवस्था के कतिपय संकेत वेद में अवश्य उपलब्ध होते हैं। वैदिक परम्परा में बलपूर्वक स्थापित की गयी सामाजिक और मानवीय समानता, उसे मानवाधिकार की मान्यता प्रदान करती है।[6] वैदिक समाज समत्व का पोषक था। इसीलिए वेदों में कही भी एक धर्म या समुदाय को ध्यान में रखकर उपदेश नहीं दिया गया है अपितु सम्पूर्ण मानवमात्र के हित साधन के लिए उपदेश है। समाज या समूह की सर्वांगीण उन्नति के मूल कारण के रूप में मानवीय समानता का प्रतिपादन ही भारतीय संस्कृति का मूल उद्देश्य है। जिसमें सभी मानवों को अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए मिलकर चलने, समान रूप से विचार करने की आज्ञा दी गयी है-

"सं गच्छधावं सं वदधावं सं वो मनांसि जानताम।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।"[7]

समत्व भावना से ओत-प्रोत मन परमार्थ के प्रति निष्ठावान होता है। इस मंत्र में सामाजिक उत्कृष्ट भावना का सुन्दर उपदेश है कि तुम सब परस्पर मिलकर चलो एक दूसरे के साथ शिष्टता एवं शालीनता का व्यवहार करो। तुम लोग विरूद्ध वाद को छोड़कर एक-दूसरे के साथ प्रेम सौहार्द और मधुरता का व्यवहार करो तुमसे पहले के कर्तव्यनिष्ठ ज्ञानीजन मिलकर, परस्पर सहयोग से विविधाा प्रकार का ज्ञान प्राप्त करते हुए अपने-अपने कर्तव्य कर्म की उपासना करते आये हैं। वैसे ही तुम लोग भी समष्टि भावना से प्रेरित होकर एक साथ कार्यो में प्रवृत्ति हो एकमत्य से रहो और परस्पर सद्भाव में रत रहो।

मानवीय समानता में सभी मनुष्य समान हैं उनमें न कोई छोटा है और न कोई बड़ा सभी भातृभाव को धारण करते हुए उन्नति के लिए मिलकर कर्म करते आगे बढ़ते हैं। जब सब समान हैं तो भेदभाव कैसा ऋषि कामना करते हैं कि तुम सबका हृदय सदा प्रेम सहित और विरोध रहित होकर एक समान हों। तुम्हारा मन एक समान हों। जिससे तुम्हारा बल सामर्थ्य एक-दूसरे की

सहायता से खूब बढ़ें-

"समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो पथा वः सुसहासति।।"[8]

वेद ऋचाओं की ये पंक्तियाँ प्रेम की उच्च भावना को निर्देशित करती है। समभाव का यह महान आदर्श जिसकी आज महती आवश्यकता है। वेदों के अनुसार सभी मानव भाई-भाई हैं जन्म से न कोई छोटा है और न कोई बड़ा। इस समानता के भाव को धारण करते हुए हम सब मिलकर सामाजिक उन्नति के लिए मिलकर प्रयत्न करें।

"अज्येष्ठासों अकनिष्ठास एतें संभ्रातरो वावृधुः गया सौभगाय।"[9]

समता भावना के माहात्म्य के प्रकाशक वैदिक विचार जहाँ एक ओर समाज की उन्नति के लिए अपेक्षित आधार के अभिव्यंजक हैं, वही, वे मानवाधिकार का स्वरूप भी उपन्यस्त करते हैं।[10] स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता भी जाति, धर्म, की जंजीरों को तोड़कर समता की बात करती है और यह समता तभी सम्भव है जब सब मिलकर जांति-पांति के दीवारों को तोड़कर एक हो जायें अर्थात् सम्पूर्ण मानवता एक हो जाये। इसीलिए कवि कमजोर वर्ग का आह्वान करता है कि-

"जातिधर्म की तोड़ श्रृंखला खुली हवा में आओ
दुनिया के शोषित मिलकर अब एक सभी हो जाओ
पूंजीवाद मिटा दो समता तभी विश्व में होगी
मनुष्यवाद मिटा दो दुनिया से तो मानवता पनपेगद"[11]

इसी तरह रामेश्वर शुक्ल अंचल भी सदियों से अत्याचार एवं शोषण व सामाजिक असमानता के शिकार कमजोर वर्ग के लिए मानवाधिकार की मांग करते हुए एक ऐसे नवीन समाज की रचना चाहते हैं जिसमें ऊँच-नीच के भेद-भाव से मुक्त, समता पर आधरित समाज हो-

"मेरे आंखो में सपनों का, एक नया संसार बसा,
मेरी आँखो में समाज का, एक नया आकार बसा।
मेरा आग्रह है समता पर, वर्ग रूग्ण मन स्वस्थ बने,
झुकी कमर, अवनत मस्तक, मानव का सिर उठे तने।"

स्वतन्त्रता-

निर्भयता और सुरक्षा से स्वतंत्रता उपजती है, जो मानव मात्र का एक विशेष अधिकार है। समानता की ही एक पक्ष स्वतंत्रता है। कोई अपने को बड़ा मानकर किसी को अपने अधीन न बनायें यही स्वतंत्रता है। स्वतंत्रताके कई रूप हैं जैसे- आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धर्मिक तथा राजनैतिक। 'अभयम्' वेद का महान् सन्देश है। सभी मनुष्य स्वतन्त्र कर्म, स्वतन्त्र वाणी और स्वतन्त्र विचार के अधिकारी हैं- "यो नो द्वेषत पृथिवी"[12] अथर्वेद के इस मन्त्र द्वारा स्वतंत्रताके अधिकार के लिए प्रार्थना की गयी है। कि शत्रुता और द्वेष भावना से युक्त जो लोग हमें परतन्त्रता के बंधन में जकड़ना चाहते हैं, ऐसे शत्रुओं का समूल नाश हो।

'स्वराज्य' की अवधारणा वेद का अप्रतिम विचार है। 'स्वराज्य की चाह करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है और यदि स्वराज्य है तो उसकी सुरक्षा करना भी उसका कर्त्तव्य है- "व्यचिष्ठें बहुपात्ये यतेमहि स्वराज्ये।'[13]

लोगों को स्वराज्य से वंचित करने का अधिकार किसी को भी नहीं है-

'कच्चन प्रियम् न मिनन्ति स्वराज्यम्।'[14]

मानवाधिकार और स्वतंत्रता इन दोनों के सहअस्तित्व में ही समस्त मानवता का विकास छिपा है। एक विशेष भावनात्मक सम्बन्ध इन दोनों को जोड़ता है। वैदिक वाङ्मय को भारत ही क्या सम्पूर्ण विश्व को एकता के सूत्र में बांधने का अपूर्व योगदान है। एकता में ही मानव कल्याण निहित है जहां छोटे-बड़े का भेद मिट जाता है। कवि भूपेन्द्र नाथ शुक्ल भी स्वतंत्रताके नव निर्माण और विषमता को दूर करने की ओर ध्यान दिलाते हुए 'जियो और जीने दो' के सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं-

"खुद जियो और जीने दो का
सिद्धान्त मानवीय चित्र बने।
मानव-मानव ही धरती पर
बस यहां बसे या वहां बसे।"[15]

हिन्दी कविता स्वतन्त्रता, समता और बन्धुत्व की भावना से युक्त मानवीय गुणों को संरक्षण प्रदान करते हुए 'सर्वे भवन्तु सुखिन: की कामना करती है। मानव कल्याण की चिन्ता कवियों को है। वे ऐसे समाज की कल्पना करते है जहां ऊँच-नीच के भेद भाव न हो और नहीं जाति व वर्ग हो, सभी स्वतन्त्र और सुखी हों-

"समस्या एक, मेरे सभ्य नगरों ग्रामों में
सभी मानव, सुखी, सुन्दर व शोषण मुक्त
कब होगें।"[16]

वेद जिस विश्वबन्धुत्व, मानवतावाद और उन्मुक्त राष्ट्रीयता का सन्देश देते हैं। स्वातन्त्र्योत्तर कविता का भी मूल उद्देश्य एक नयी संस्कृति और सभ्यता को जन्म देना है, जो आदमी-आदमी के बीच की दीवारों को तोड़ दे। विश्व की सम्पूर्ण मानवता को एक सूत्र में बांधकर एक ऐसे विश्व की ओर उन्मुख करें जिससे अन्याय का परिष्कार हो सके। इसी भावना को कवि नागार्जुन व्यक्त करते हैं-

"विषमता के प्रति घृणा का अनोखा उपहार लो
विश्व मानव के लिए मनुहार लो।"[17]

न्याय-

मानवाधिकार की चेतना का एक अर्थ है अन्याय के विरूद्ध संघर्ष। नैतिक आदर्शो की स्थापना करते हुए वैदिक ऋषियों ने न्याय को समुचित महत्व दिया है। वैदिक ऋषि की दृष्टि में सुरक्षा और न्याय सभी मानवों का अधिकार है। दूसरों के अपराध और पापों से सदाचारी जनों के जीवन की रक्षा करना शासक का कर्त्तव्य है। सुखमय और शान्तिपूर्ण जीवन जन्म लेने वाले प्रत्येक मनुष्य का प्रथम अधिकार है। इस अभिप्राय से सभी देवताओं से 'भद्र' की याचना की गयी है- "भद्रं कर्णेभि: श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्र:।"[18]

व्यक्ति के लिए जब समता भावना जैसे अन्य उदात्त गुणों का निर्देश है, तब प्रत्येक व्यक्ति को दूसरे से होने वाले अनाचार या अन्याय के प्रतिकार का अधिकार स्वत: प्राप्त हो जाता है। वेद में 'ऋतम' को सम्पूर्ण व्यवस्था का तत्व निर्धारित किया है। इसीलिए जो राजा अर्थात् अधिकारी न्यायकर्ता है, उसके प्रति कामना की गयी है कि सत्य से असत्य को पृथक करके मेरे राष्ट्र का आधिपत्य प्राप्त करो-

"ऋतेन राजन्नृतं विविचन् मम राष्ट्रस्याधि पत्यमेहि।"[19]

उचित न्याय सभी का अधिकार है। किसी भी स्थिति में नियमों को तोड़ने वाले या उनके साथ खिलवाड़ करने वाले

दण्ड से वंचित नहीं रहना चाहिए। स्वातन्त्र्योत्तर कवि भी भारतीय जन-जीवन के सुख-दुख और पीड़ा को स्वर देते हैं। नार्गाजुन अन्याय का विरोध कर शोषित जनता को न्याय दिलाने के लिए प्रतिबद्ध हैं-

"प्रतिबद्ध हूँ/संबद्ध हूँ
आबद्ध हूँ, जी हाँ प्रतिबद्ध हूँ
बहुजन समाज की अनुपल प्रगति के निमित्त
संकुचित स्व की आपाध्पी के निषेधर्थ.....
अविवेकी भेड़िया.....धसान के खिलाफ .....
अंध बधिर व्यक्तियों को सही राह बतलाने के लिए
अपने आपको भी व्यामोह से बार बार उबारने की खातिर
.....प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ शतधा प्रतिबद्ध हूँ।"

आज के जीवन में बढ़ती हुयी व्यावसायिक प्रवृत्ति का सामाजिक सम्बन्ध पर बहुत दुष्प्रभाव पड़ा है। कम समय में अधिक से अधिक सम्पत्ति अर्जित करने की होड़, स्वार्थपरता, भोगपरक जीवन शैली, अनाचार, अत्याचार व अन्याय को बढ़ावा दे रहे हैं। इसे सब दुष्परिणामों से बचने के लिए हमें पुन: संस्कृति के अमृत तत्व को आधार मानकर उस पर चलना श्रेयस्कर है। अन्याय के विरूद्ध संघर्ष का एक अहिंसक साधन हमें महात्मा गांधी ने सत्याग्रह के रूप में दिया और भारत की स्वतंत्रताप्राप्ति के लिये उसका सफल प्रयोग भी किया। यह अहिंसा भारतीय मूल्य का अन्याय के विरूद्ध संघर्ष के लिए विनियोजन करने का सुन्दर उदाहरण है। इस उच्च आदर्श को नरेन्द्र शर्मा जी गांधी जी को जीवन दृष्टि द्वारा व्यक्त करते हैं-

"सबका सुख ही स्वांत सुख है, हुआ सत्य का दर्शन
व्यष्टि समष्टि, स्व पर, करता मन सीमा का उल्लंघन।
सीमोल्लंघन किया, स्वयं कोयम-नियमों में बांधा
जागा अद्वय-भाव हृदय में, सेवा धर्म सनातन।।"

आज मानवाधिकार विश्व चिन्तन का प्रमुख विषय है। जिसका केन्द्र बिन्दु मानव मूल्य है। सम्पूर्ण विश्व एक मानव परिवार के रूप में मान्य है जो कि भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत 'वसुधैव कुटुम्बकम' के अन्तर्गत प्राचीन काल से स्वीकार्य है। मनुष्य होने के नाते मान मर्यादा के साथ जीना मानव का मूलभूत नैतिक गुण है। यही नैतिक गुण स्पष्ट रूप में मानवाधिकार है। मानव मूल्य को धारण करने वाला चाहे किसी देश या काल में हो, सर्वत्र सम्मान्य होता है क्योंकि वह कभी किसी का अहित नही करता वैदिक वाङमय हमें मानव कल्याण की भावना की ओर अग्रसर करता है। साहित्य सामाजिक सन्दर्भ में मानवीय अनुभवों से सिक्त अभिव्यक्ति है। उसका प्रयोजन क्षुद्र व्यक्ति स्वार्थ के धरातल से ऊपर उठकर विश्वमानव का हित चिन्तन करना, व्यक्ति को अपने अधिकारों के प्रति जाग्रत करना और समता, बन्धुत्व की भावना से युक्त मानवीय गुणों को व्यवहार में लाने के लिए प्रेरित करना है। मुक्तिबोध का मानना है कि- "जनता के मानसिक परिष्कार उसके आदर्श और मनोरंजन से लेकर क्रांतिपथ की तरफ मोड़ने वाला, प्राकृतिक शोभा और प्रेम, शोषण और सत्ता के घमण्ड को चूर करने वाला, स्वतंत्रता और मुक्ति-गीतों को अभिव्यक्ति देने वाला, ये सभी कोटियाँ जनवादी काव्य है, बशर्ते वह मन को मानवीय, जन को 'व्यापकजन' बना सके और जनता को मुक्ति पथ पर अग्रसर कर सके।"[20] स्वान्त्रयोत्तर हिन्दी कविता इसी लक्ष्य को आगे लेकर बढ़ती है। रघुवीर सहाय का काव्य संग्रह 'आत्महत्या के विरूद्ध' आधुनिक हिन्दी कविता में मानवाधिकार का घोषणा पत्र कहा जा सकता है। रामदास जैसा अविस्मणीय चरित्र आजाद भारत में अंतिम आदमी के सम्मापूर्वक जीने के अधिकार को पहली बार बुलंदी से उठाता है।"[21] इक्कीसवीं सदी के आरम्भिक दौर में किसानों के सम्मानपूर्वक जीने के हक के सवाल को उठाकर राजूशर्मा ने भारत राष्ट्र-राज के विकास के दावे की पोल खोल दी है। इसी तरह ज्ञानेद्रपति ने अपने संग्रह 'सशंयात्मा' की कविताओं में आदिवासियों को उनके जल, जंगल, जमीन से विस्थापित किए जाने की व्यथा गाथा कही है। भवानी प्रसाद मिश्र ने अभिव्यक्ति स्वतंत्रताजैसे अपने मानवाधिकार को बचाये रखने के लिए त्रिकाल संध्या' जैसा कविता संग्रह लिखा।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि वैदिक वाङमय हो या हिन्दी साहित्य सिद्धान्त में मानवाधिकारों के प्रति पूर्णत: सचेत हैं। मानवाधिकारों का उचित पालन सभी प्रकार के विकास और शान्ति का मार्ग प्रशस्त करता है। वेदों के अनुसार कर्मशीलता, सदाचार और उदात्त चरित्र इसके आधार स्तम्भ है। कर्म के बिना अधिकार की बात करना सर्वथा गलत है। वैदिक ऋषि इसलिए हमें कर्त्तव्य पालन के लिए प्रेरित करते हैं। वैदिक मन्त्र की विशुद्धता और तद्रूपता उनके माहात्म्य को बढ़ा देती है। यदि मनुष्य के अंदर सत्य, अंहिसा, प्रेम, विनम्रता, दया, क्षमा, धैर्य, पवित्रता इत्यादि मानवमूल्य संस्कारित नही होगें तो मानवाधिकार आयोग अपनी कार्य प्रणाली में कभी भी स्फल नही हो सकता। अत: हमें पुन: वैदिक संस्कृति का प्रशिक्षण बाल्यवस्था से देने की आवश्यकता है। सबके अन्दर स्वत: लोकोपकारक वृद्धि होवे, ताकि हम सभी वैदिक ऋषि की तरह समस्त विश्व के सुख समृद्धि की कामना कर सकें-

"विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परसुव
यद भद्र तन्न आ सुव।"

सन्दर्भ:-

1. मानवाधिकार, जय जय राम उपाध्याय, पृ0 16
2. यजुर्वेद, 23-52
3. ऋग्वेद, 4-35-8

शेष पृष्ठ 60 पर

प्रथम संस्करण 2005, नागमती-वियोग खंड, पृ0-335-326, दो0-9
21. गुप्त, परमेश्वरी लाल, मौलानादाऊद दलमईकृत चंदायन, हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर,1964,दिल्ली, पृ0-307, कड़वक-407
22. गुप्त, परमेश्वरी लाल, कुतुबनकृत मिरगावती, प्रथम संस्करण,1967, वाराणसी, विश्वद्यिालय प्रकाशन, पृ0-335, कड़वक-326
23. शुक्ल, आ0 रामचंद्र, जायसी ग्रंथावली, जयभारती प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2005, नागमती-वियोग खंड, पृ0-146, दो0-9
24. गुप्त, परमेश्वरी लाल, मौलानादाऊद दलमईकृत चंदायन, हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर,1964,दिल्ली,पृ0-307, कड़वक-407
25. गुप्त, परमेश्वरी लाल, कुतुबनकृत मिरगावती, प्रथम संस्करण,1967, वाराणसी, विश्वद्यिालय प्रकाशन, पृ0-335, कड़वक-327
26. शुक्ल, आ0 रामचंद्र, जायसी ग्रंथावली, जयभारती प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2005, नागमती-वियोग खंड, पृ0-146, दो0-11
27. गुप्त, परमेश्वरी लाल, मौलानादाऊद दलमईकृत चंदायन, हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर,1964,दिल्ली,पृ0-308, कड़वक-409
28. गुप्त, परमेश्वरी लाल, कुतुबनकृत मिरगावती, प्रथम संस्करण,1967, वाराणसी, विश्वद्यिालय प्रकाशन, पृ0-336, कड़वक-329
29. शुक्ल, आ0 रामचंद्र, जायसी ग्रंथावली, जयभारती प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2005, नागमती-वियोग खंड, पृ0-146, दो0-11
30. गुप्त, परमेश्वरी लाल, कुतुबनकृत मिरगावती, प्रथम संस्करण,1967, वाराणसी, विश्वद्यिालय प्रकाशन, पृ0-337, कड़वक-330
31. शुक्ल, आ0 रामचंद्र, जायसी ग्रंथावली, जयभारती प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2005, नागमती-वियोग खंड, पृ0-146, दो0-11
32. गुप्त, परमेश्वरी लाल, कुतुबनकृत मिरगावती, प्रथम संस्करण,1967, वाराणसी, विश्वद्यिालय प्रकाशन, पृ0-338, कड़वक-331
33. शुक्ल, आ0 रामचंद्र, जायसी ग्रंथावली, जयभारती प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2005, नागमती-वियोग खंड, पृ0-147, दो0-14
34. गुप्त, परमेश्वरी लाल, कुतुबनकृत मिरगावती, प्रथम संस्करण,1967, वाराणसी, विश्वद्यिालय प्रकाशन, पृ0-338, कड़वक-331

पृष्ठ 48 का शेष

7. छिन्नमस्ता, प्रभा खेतान हंस जनवरी-फरवरी मार्च 1991, अक्षर प्रकाशन, पृ0 50।
8. वही, पृ0 55।
9. वही, पृ0 58।
10. वही, पृ0 69।
11. कठगुलाब-मृदुला गर्ग भारतीय ज्ञानपीठ सन् 2000 पृ0 56।
12. वही, पृ0 97।
13. वही, पृ0 98।
14. वही, पृ0 104।
15. वही,
16. वही, पृ0 147।
17. वही, पृ0 194।
18. वही, पृ0 194।
19. एक जमीन अपनी, चित्र मुद्रगल प्रभात प्रकाशन 1990 पृ0 19।
20. वही,
21. वही, पृ0 196।
22. वही, पृ0 205।
23. निष्कवच राजी सेठ भारतीय ज्ञानपीठ 1995 पृ0 84-85।
24. एक पत्नी के नोट्स ममता कालिया मयूर पेपर बैक्स छाया-मयूर अक्टूबर दिसम्बर, 1994 पृ0 333।
25. आंवा-चित्र मुद्गल सामयिक प्रकाशन 1999 पृ0 47-48।
26. छिन्नमस्ता प्रभा खेतान हंस जनवरी-फरवरी मार्च, 1991 पृ0 55।
27. वही,
28. वही, पृ0 58।
29. निष्कवच, राजी सेठ, भारतीय ज्ञानपीठ, 1995 पृ0 91।
30. वही, पृ0 92।
31. पितृ सत्ता के नये रूप-ताकतवर औरत की मजबूरियाँ अभयकुमार दुबे-हंस अक्षर प्रकाशन मार्च, 2001 पृ0 37।
32. कॉलगर्ल्स- मूल समस्या तथा विचार पद्धति-डॉ0 प्रोमिला कपूर हिन्द पॉकेट बुक्स, 1993 पृ0 29।
33. बन्द गलियों के विरूद्ध, स्त्री का भविष्य अर्चना वर्मा, संपादक मृणाल पाण्डे/क्षमा शर्मा राजकमल प्रकाशन, 2001 पृष्ठ 48।
34. वही,
35. औरत अस्तित्व और अस्मिता, अरविंद जैन सारांश प्रकाशन, 2000 पृ050
36. वही,
37. बन्द गलियों के विरूद्ध, स्त्री का भविष्य अर्चना वर्मा, संपादक मृणाल पाण्डे/क्षमा शर्मा राजकमल प्रकाशन, 2001, पृष्ठ 47।
38. आवां, चित्र मुद्गल सामयिक प्रकाशन, 1997, पृ0 461।
39. वही, पृ0 205

पृष्ठ 53 का शेष

4. वर्तमान, अनूप- 560
5. साठोत्तरी हिन्दी कविता में जनवादी चेतना, नरेन्द्र सिंह, पृ0 150
6. गुरू कुल शोध भारती, अक्टूबर 2010, अंक- 14 पृ0- 11
7. ऋग्वेद, 10-191-2
8. वही;, 10-191-4
9. वही;, 5-60-5
10. गुरूकुल, शोध भारती, अक्टूबर 2010, अंक- 14, पृ0- 10
11. उत्पीड़न की यात्र, लक्ष्मीनारायण सुध्कर, पृ0 61
12. अथर्ववेद, 12-1-14
13. ऋग्वेद, 5-66-6
14. वही;, 5-82-2
15. माधवी, भूपेन्द्र शुक्ल, पृ0 119
16. मुक्तिबोध रचनावली प्रथम भाग, नेमिचन्द्र जैन, पृ0- 211
17. पुरानी जुतियों का कोरस, नागार्जुन, पृ0 30
18. ऋग्वेद, 1-89-8
19. वही;, 10-124-5
20. मुक्तिबोध रचनावली, खण्ड- 5, नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, सं0 नेमिचन्द्र, पृ0- 76
21. सहृदय, जनवरी-मार्च, 2011, अंक- 7, पृ0- 23